The Infinite
An International Peer Reviewed / Refereed Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 3 | Issue 4 | April 2026
ISSN: 3048-9539 (Online)
Website: www.theinfinite.co.in

जनप्रतिनिधि को वापस बुलाने का अधिकार : भारत में चुनावी सुधार

प्रो० (डॉ०) अशोक कुमार सोनकर

विधि संकाय, लखनऊ विश्वविद्यालय

दीपक

शोधार्थी, विधि संकाय, लखनऊ विश्वविद्यालय

ARTICLE DETAILS

Research Paper

मुख्य शब्द :

वापस बुलाने का अधिकार, चुनावी सुधार, लोकतांत्रिक जवाबदेही, वोटर सशक्तिकरण, सहभागी लोकतंत्र।

सारांश :

भारत एक लोकतांत्रिक देश है जहाँ नागरिक सरकार चलाने के लिए अपने प्रतिनिधियों को चुनते हैं। लोकतंत्र की मजबूती इस बात पर निर्भर करती है कि ये चुने हुए प्रतिनिधि लोगों के प्रति कितने जवाबदेह हैं। मौजूदा हालात में, एक अहम सवाल उठता है क्या सिर्फ चुनावों के दौरान वोट देना ही काफी है, या नागरिकों को अपने प्रतिनिधियों को उनके कार्यकाल के दौरान हटाने का अधिकार भी होना चाहिए? इसी संदर्भ में, **"वापस बुलाने का अधिकार"** एक अहम चुनावी सुधार के तौर पर सामने आता है। वापस बुलाने का अधिकार वोटरों को यह हक़ देता है कि अगर कोई चुना हुआ प्रतिनिधि गड़बड़ करता है या जनता के हितों को सबसे पहले नहीं रखता, तो वे उसे उसके कार्यकाल खत्म होने से पहले ही हटा सकें। यह लोकतंत्र को ईमानदार बनाए रखने और यह पक्का करने का एक सीधा तरीका है कि लोगों की बात सचमुच सुनी जाए। दुनिया के दूसरे हिस्सों में इसे पहले ही आजमाया जा चुका है। स्विट्जरलैंड इसका इस्तेमाल करता है, अमेरिका के कुछ राज्यों जैसे कैलिफोर्निया में वापस बुलाने के कानून हैं, और वेनेजुएला में भी ऐसा ही है। असल में, वोटरों को अपने प्रतिनिधियों को हटाने का एक साफ कानूनी रास्ता मिल जाता है, जिससे राजनेता हमेशा चौकस रहते हैं। भारत ने अभी तक इसे पूरे देश में लागू नहीं किया है। लेकिन छत्तीसगढ़ ने पंचायती राज में इसका एक सीमित रूप इस्तेमाल करना शुरू कर दिया है ताकि अगर जनता चाहे तो स्थानीय निकायों के प्रतिनिधियों को वापस बुला सकती है। लोग इसे जमीनी स्तर के लोकतंत्र के लिए एक बड़ा कदम मानते हैं। अगर भारत वापस बुलाने के अधिकार को और बड़े पैमाने पर

अपना ले, तो हालात बदल सकते हैं। राजनीतिक जवाबदेही बढ़ जाएगी, भ्रष्टाचार कम हो सकता है, और लोग शायद अपनी सरकार पर ज्यादा भरोसा करने लगेंगे। फिर भी, सब कुछ इतना आसान नहीं है। अराजकता की कल्पना करना आसान है राजनीतिक अस्थिरता, लोगों द्वारा सिस्टम का गलत इस्तेमाल, और जो भी सत्ता में है उसके लिए सिरदर्द। सच कहूँ तो, वापस बुलाने के अधिकार में सचमुच बहुत संभावनाएँ हैं। लेकिन भारत में इसे कामयाब बनाने के लिए मजबूत कानूनों, साफ नियमों और शायद इसे धीरे–धीरे लागू करने की जरूरत होगी। सबसे अच्छा तरीका क्या है? स्थानीय स्तर पर शुरुआत करें, देखें कि यह कैसा रहता है, और अगर यह कामयाब साबित होता है, तो इसे ऊँचे स्तरों पर आजमाएँ।

1. परिचय

भारत खुद को दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र कहता है, और हर चीज आजाद और निष्पक्ष चुनावों से शुरू होती है। लोग एक तय समय के लिए अपने नेताओं को चुनते हैं, और उन नेताओं से यह उम्मीद की जाती है कि वे जनता की सेवा करें। लेकिन सच कहूँ तो भ्रष्टाचार, खराब प्रदर्शन, और नेताओं का वोटरों की चिंताओं से दूर हो जाना जैसी चीजें अब सचमुच की समस्याएँ बन गई हैं। इसीलिए आजकल लोग चुनावी सुधारों के बारे में इतनी ज्यादा बात करते हैं। एक विचार जिस पर बहुत ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है, वह है वापस बुलाने का अधिकार। असल में, यह मतदाताओं के लिए एक कानूनी तरीका है जिससे वे अपने प्रतिनिधि को उसका कार्यकाल खत्म होने से पहले ही हटा सकते हैं अगर वह अपना काम ठीक से नहीं कर रहा है या जनता के हित के खिलाफ काम कर रहा है। इसका मकसद लोकतंत्र को सिर्फ हर पाँच साल में एक बार होने वाली चीज से बदलकर एक लगातार चलने वाली, भागीदारी वाली प्रक्रिया बनाना है। हालाँकि, भारत में अभी ऐसा कोई सीधा तरीका नहीं है जिससे लोग राष्ट्रीय या राज्य स्तर के प्रतिनिधियों को सीधे वापस बुला सकें।

एक बार चुने जाने के बाद, वे आम तौर पर अपना पूरा कार्यकाल वहीं बिताते हैं जब तक कि किसी बहुत बड़ी वजह से उन्हें अयोग्य न ठहरा दिया जाए। इसलिए, अगर मतदाता नाखुश हैं, तो उन्हें अगले चुनाव तक इंतजार करना पड़ता है। इससे समस्याएँ लंबे समय तक बनी रहती हैं जैसे खराब शासन, जवाबदेही की कमी, वगैरह क्योंकि नेताओं को पता होता है कि इस बीच कोई भी उनका कुछ खास बिगाड़ नहीं सकता। भारत जैसे विशाल और विविध देश के लिए, जहाँ हर तरह की क्षेत्रीय चुनौतियाँ हैं, वापस बुलाने का अधिकार काफी प्रासंगिक लगता है। लोग अब राजनीति पर ज्यादा ध्यान दे रहे हैं, अपने नेताओं से ज्यादा उम्मीदें रख रहे हैं, और वे ऐसे विकल्प चाहते हैं जिनसे वे अपने प्रतिनिधियों पर लगाम कस सकें और ऐसा सिर्फ चुनाव के मौसम में ही नहीं, बल्कि हर समय कर सकें।

कुछ विद्वानों का मानना है कि यह तरीका राजनेताओं और मतदाताओं के बीच की दूरी को कम करने में मदद कर सकता है। बेशक, यह इतना आसान भी नहीं है। इसमें कुछ मुश्किल सवाल भी हैं जैसे कि इसका राजनीतिक स्थिरता पर क्या असर पड़ेगा, क्या लोग इस वापस बुलाने की प्रक्रिया का गलत इस्तेमाल कर सकते हैं, और क्या इसे लागू करना व्यावहारिक रूप से संभव भी है या नहीं। इसलिए, यह चर्चा सिर्फ कानून तक ही सीमित नहीं है; बल्कि यह राजनीति और प्रशासन से भी गहराई से जुड़ी हुई है।

यह अध्ययन भारत में एक संभावित चुनावी सुधार के तौर पर वापस बुलाने के अधिकार का बारीकी से विश्लेषण करता है। यह इस बात की पड़ताल करता है कि इसका क्या मतलब है, यह क्यों जरूरी है, इससे क्या फायदे हो सकते हैं, और इसके साथ कौन–कौन सी चुनौतियाँ जुड़ी हुई हैं। यह शोध–पत्र इस सवाल पर भी विचार करता है कि क्या यह तरीका वास्तव में लोकतंत्र में जवाबदेही को बढ़ाता है, या फिर यह देश के शासन–प्रशासन के लिए नई मुश्किलें ही खड़ी करता है।

2. वापस बुलाने के अधिकार की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

वापस बुलाने के अधिकार की अवधारणा का एक लंबा ऐतिहासिक विकास रहा है, जिसकी जड़ें लोकतांत्रिक प्रणालियों के विकास में निहित हैं। इसके शुरुआती निशान प्राचीन एथेनियन लोकतंत्र में मिलते हैं, जहाँ नागरिक शासन–प्रशासन में सीधे तौर पर हिस्सा लेते थे। हालाँकि यह आधुनिक रिकॉल तंत्रों जैसा हूबहू नहीं था, फिर भी यह प्रणाली इस सिद्धांत को दर्शाती थी कि सार्वजनिक अधिकारी अंततः जनता के प्रति जवाबदेह होते हैं।

आधुनिक काल में, यह विचार विभिन्न देशों में लोकतांत्रिक सुधारों के साथ–साथ विकसित हुआ। स्विट्जरलैंड को अक्सर प्रत्यक्ष लोकतंत्र के तत्वों से जुड़े सबसे शुरुआती क्षेत्रों में से एक माना जाता है, जहाँ नागरिकों को शासन में भागीदारी के सशक्त अधिकार दिए गए थे। बाद में, संयुक्त राज्य अमेरिका के कुछ हिस्सों में इस अवधारणा को औपचारिक मान्यता मिली। 1903 में, लॉस एंजिल्स में नगरपालिका स्तर पर रिकॉल का एक प्रावधान पेश किया गया, और 1908 तक, मिशिगन और ओरेगन जैसे राज्यों ने राज्य के अधिकारियों के लिए रिकॉल तंत्र को अपना लिया था।[1]

इन घटनाक्रमों ने आधुनिक लोकतांत्रिक प्रणालियों में राइट टू रिकॉल के संस्थागतकरण में एक महत्वपूर्ण चरण को चिह्नित किया। भारत में, चुने हुए प्रतिनिधियों को वापस बुलाने का विचार स्वतंत्रता आंदोलन के दौर से ही मिलता है। सचिंद्र नाथ सान्याल उन शुरुआती विचारकों में से एक थे जिन्होंने ऐसे प्रावधान की वकालत की थी।[2] 1924 में, हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन के घोषणापत्र में, उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि नागरिकों के पास अपने प्रतिनिधियों को हटाने का अधिकार होना चाहिए, यदि वे जनहित में कार्य करने में विफल रहते हैं।[3] उन्होंने तर्क

[1] जोसेफ एफ. जिम्मरमैन, द रिकॉलः ट्रिब्यूनल ऑफ द पीपल (स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ न्यूयॉर्क प्रेस, अल्बानी, 1997)।
[2] सचिन्द्र नाथ सान्याल, द रिवोल्यूशनरी मूवमेंट इन इंडिया (आत्मा राम एंड संस, दिल्ली, 1924)।
[3] हिंदुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन, 1924 का घोषणापत्र, ए.आर. में पुनर्मुद्रित।

दिया कि ऐसे तंत्र के बिना, लोकतंत्र अधूरा ही रहेगा। संविधान सभा की बहसों के दौरान भी इस मुद्दे पर चर्चा हुई थी।[4] चर्चा का एक मुख्य बिंदु यह था कि क्या नागरिकों के पास न केवल अपने प्रतिनिधियों को चुनने का अधिकार होना चाहिए, बल्कि उनके कार्यकाल के दौरान उन्हें हटाने का अधिकार भी होना चाहिए।[5] हालाँकि कुछ सदस्यों ने इस विचार का समर्थन किया, लेकिन डॉ० बी०आर० अंबेडकर ने इस प्रस्ताव को स्वीकार नहीं किया, और भारत ने निश्चित कार्यकाल पर आधारित प्रतिनिधि लोकतंत्र के मॉडल को ही जारी रखा।[6]

18 जुलाई 1947 को, सरदार वल्लभभाई पटेल ने भी संविधान सभा की चर्चाओं के दौरान इस मुद्दे को संबोधित किया था।[7] उन्होंने इस बात पर चिंता व्यक्त की कि रिकॉल प्रावधानों की अनुमति देने से शासन–प्रशासन में अस्थिरता आ सकती है; उन्होंने कहा कि प्रतिनिधियों द्वारा कभी–कभार किए जाने वाले कदाचार के कारण पूरी चुनावी प्रणाली को कमजोर नहीं किया जाना चाहिए।[8] इसके बजाय, ऐसे मामलों को मतदाताओं के विवेक और स्वयं चुनावी प्रक्रिया पर ही छोड़ दिया जाना चाहिए। इसके बावजूद, कुछ सदस्यों को यह डर था कि वापस बुलाने जैसी व्यवस्थाओं या जवाबदेही के मजबूत साधनों के बिना, स्थानीय शासन निकाय अनुत्तरदायी या मनमानी करने वाले बन सकते हैं।

समय के साथ, भारत ने जमीनी स्तर पर जवाबदेही के कुछ सीमित रूप अपनाए। आज, रिकॉल जैसे प्रावधानों का सबसे नजदीकी व्यावहारिक उदाहरण कुछ राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं में मिलता है, जहाँ गाँव के स्तर पर अविश्वास प्रस्ताव या सीमित रिकॉल प्रक्रियाएँ काम करती हैं।[9] इस प्रकार, रिकॉल के अधिकार का ऐतिहासिक विकास प्राचीन सहभागी शासन से लेकर चुनावी जवाबदेही पर आधुनिक बहसों तक के क्रमिक विकास को दर्शाता है। लोकतांत्रिक सुधारों पर होने वाली चर्चाओं में यह आज भी एक महत्वपूर्ण विषय बना हुआ है।

3. अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य और अन्य देशों में वापस बुलाने का अधिकार

वैश्विक लोकतांत्रिक व्यवस्था में वापस बुलाने का अधिकार की अवधारणा पूरी तरह से नई नहीं है। यह प्रत्यक्ष लोकतंत्र की एक महत्वपूर्ण विशेषता है, जहाँ नागरिकों को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों को उनका कार्यकाल पूरा होने से पहले ही हटाने की शक्ति दी जाती है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर, यह तंत्र सीमित संख्या में देशों और उप–राष्ट्रीय अधिकार–क्षेत्रों में लागू है, जो लोकतांत्रिक जवाबदेही के प्रति अलग–अलग दृष्टिकोणों को दर्शाता है।

---

[4] संविधान सभा वाद–विवाद (सीएडी), खंड 4, 1947, लोकतांत्रिक जवाबदेही और प्रतिनिधियों के कार्यकाल पर चर्चा।

[5] ग्रानविले ऑस्टिन, भारतीय संविधान : राष्ट्र की आधारशिला (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1966) 28–30।

[6] बी.आर. अम्बेडकर, भाषण और लेखन, खंड 10 (डॉ. अम्बेडकर फाउंडेशन, भारत सरकार, 2014) 45–47।

[7] संविधान सभा बहस (सीएडी), 18 जुलाई 1947, सरदार वल्लभभाई पटेल की टिप्पणी।

[8] म.प्र. जैन, भारतीय संवैधानिक कानून (लेक्सिसनेक्सिस, 8वां संस्करण, 2018) 1050–1052।

[9] जॉर्ज मैथ्यू, भारत में पंचायती राज : विधान से आंदोलन तक (संकल्पना प्रकाशन, नई दिल्ली, 1994) 212–215।

इसका सबसे प्रमुख उदाहरण स्विट्जरलैंड है, जिसे अक्सर प्रत्यक्ष लोकतंत्र का एक आदर्श मॉडल माना जाता है। स्विट्जरलैंड में, हालाँकि संघीय स्तर पर रिकॉल चुनावों का व्यापक रूप से उपयोग नहीं किया जाता है, फिर भी कई राज्य नागरिकों को विशिष्ट कानूनी शर्तों के तहत चुने हुए अधिकारियों के खिलाफ रिकॉल प्रक्रिया शुरू करने की अनुमति देते हैं। यह प्रणाली शासन में जनता की भागीदारी की स्विट्जरलैंड की मजबूत परंपरा को दर्शाती है, जहाँ नागरिक जनमत–संग्रहों और पहलों के माध्यम से निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में सक्रिय रूप से शामिल होते हैं। एक और महत्वपूर्ण उदाहरण संयुक्त राज्य अमेरिका है, जहाँ कुछ अधिकार–क्षेत्रों में राज्य स्तर पर वापस बुलाने का अधिकार मौजूद है। सबसे उल्लेखनीय मामला कैलिफोर्निया का है, जहाँ मतदाता रिकॉल चुनाव प्रक्रिया के माध्यम से चुने हुए अधिकारियों, जिनमें गवर्नर भी शामिल हैं, को हटा सकते हैं। रिकॉल तंत्र का प्रसिद्ध उपयोग 2003 में किया गया था, जब गवर्नर ग्रे डेविस को हटाकर उनकी जगह अर्नोल्ड वार्जनेगर को लाया गया था।

यह दर्शाता है कि कैसे रिकॉल चुनाव किसी कार्यकाल के दौरान राजनीतिक नेतृत्व को काफी हद तक बदल सकते हैं। इसी तरह, वेनेजुएला में, 1999 का संविधान एक औपचारिक श्रिकॉलश प्रावधान प्रदान करता है। अनुच्छेद 72 के तहत, चुने हुए अधिकारियों, जिनमें राष्ट्रपति भी शामिल हैं, को उनके कार्यकाल के दौरान रिकॉल जनमत–संग्रह का सामना करना पड़ सकता है, बशर्ते कि मतदाताओं की आवश्यक संख्या उस याचिका का समर्थन करती हो। यह एक राष्ट्रपति–प्रणाली के भीतर प्रत्यक्ष लोकतांत्रिक नियंत्रण को संस्थागत रूप देने के प्रयास को दर्शाता है।

अंतर्राष्ट्रीय कानून के परिप्रेक्ष्य से देखें तो, हालाँकि ऐसा कोई बाध्यकारी वैश्विक समझौता नहीं है जो वापस बुलाने का अधिकार को अनिवार्य बनाता हो, फिर भी यह सिद्धांत व्यापक मानवाधिकार दस्तावेजों, जैसे कि **नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, 1966** के अनुरूप है; यह दस्तावेज नागरिकों के सार्वजनिक मामलों में भाग लेने और वास्तविक आवधिक चुनावों में मतदान करने के अधिकार को मान्यता देता है। वापस बुलाने का अधिकार को सहभागी लोकतंत्र के एक विस्तार के रूप में देखा जा सकता है, जो चुनावों के बीच की अवधि में जवाबदेही को बढ़ाता है। हालाँकि, अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार कुछ चुनौतियों को भी उजागर करता है। कई देशों में, राजनीतिक अस्थिरता, बार–बार होने वाले चुनावों और राजनीतिक प्रतिशोध के लिए संभावित दुरुपयोग की चिंताओं के कारण रिकॉल तंत्र सीमित हैं। इसलिए, अधिकांश लोकतांत्रिक प्रणालियाँ जो रिकॉल प्रावधानों को अपनाती हैं, वे चुने हुए प्रतिनिधियों को मनमाने ढंग से हटाए जाने से रोकने के लिए सख्त प्रक्रियात्मक सुरक्षा उपाय लागू करती हैं। निष्कर्ष के तौर पर, अंतर्राष्ट्रीय अनुभव यह दर्शाता है कि वापस बुलाने का अधिकार एक कारगर, लेकिन सावधानीपूर्वक विनियमित लोकतांत्रिक साधन है। स्विट्जरलैंड, संयुक्त राज्य अमेरिका (कैलिफोर्निया) और वेनेजुएला जैसे देश इसके कार्यान्वयन के अलग–अलग मॉडल प्रस्तुत करते हैं। ये उदाहरण भारत के लिए उपयोगी हो सकते हैं विशेष रूप से एक ऐसा संतुलित ढांचा तैयार करने के संदर्भ में जो राजनीतिक स्थिरता सुनिश्चित करते हुए जवाबदेही को बढ़ावा दे।

4. भारत में वापस बुलाने का अधिकार : स्थिति और इसका इस्तेमाल

भारत में वापस बुलाने का अधिकार का अधिकार राष्ट्रीय या राज्य के विधायी स्तर पर उपलब्ध नहीं है। हालाँकि, यह स्थानीय स्व–शासन के स्तर पर, विशेष रूप से कुछ राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं के लिए, बहुत ही सीमित रूप में मौजूद है।

भारत में इसका इस्तेमाल कहाँ होता है?

भारत में इसका सबसे खास उदाहरण छत्तीसगढ़ है, जहाँ ग्राम पंचायतों (गाँव के स्तर पर शासन) के चुने हुए प्रतिनिधियों के लिए वापस बुलाने का अधिकार की शुरुआत की गई है। इस व्यवस्था में, अगर वोटर सरपंच (गाँव के मुखिया) के काम से खुश नहीं होते, तो वे उनके खिलाफ उन्हें वापस बुलाने की प्रक्रिया शुरू कर सकते हैं। इसी तरह, राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तराखंड और बिहार जैसे कुछ राज्यों में स्थानीय निकायों में प्रतिनिधियों को वापस बुलाने या अविश्वास प्रस्ताव लाने की व्यवस्था है, लेकिन ये ज्यादातर अप्रत्यक्ष होती हैं और सीधे वोटरों के बजाय चुने हुए सदस्यों के जरिए काम करती हैं।

इसका इस्तेमाल कैसे होता है

पंचायत स्तर पर (उदाहरण के लिए छत्तीसगढ़ में), वापस बुलाने का अधिकार आमतौर पर इस तरह काम करता है

- चुनाव के बाद एक तय न्यूनतम समय (आमतौर पर एक साल या उससे ज्यादा) बीत जाना जरूरी है।
- पंजीकृत वोटरों के एक तय प्रतिशत को लिखित अनुरोध या याचिका जमा करनी होती है।
- अगर जरूरी संख्या पूरी हो जाती है, तो चुनाव आयोग द्वारा प्रतिनिधियों को वापस बुलाने की औपचारिक प्रक्रिया शुरू की जाती है।
- उस इलाके के वोटरों के बीच वोटिंग कराई जाती है।
- अगर ज्यादातर लोग प्रतिनिधि को वापस बुलाने के पक्ष में वोट करते हैं, तो चुने हुए प्रतिनिधि को उनका कार्यकाल पूरा होने से पहले ही उनके पद से हटा दिया जाता है।

इस प्रक्रिया को इसलिए बनाया गया है ताकि यह पक्का हो सके कि वापस बुलाने का अधिकार का बार–बार गलत इस्तेमाल न हो और यह लोगों की सच्ची नाराजगी पर आधारित हो।

राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर स्थिति

राज्य विधानसभाओं और संसद में, भारत में अभी वापस बुलाने का अधिकार के लिए कोई कानूनी व्यवस्था नहीं है। एक बार चुने जाने के बाद, विधायक और सांसद अपना पूरा कार्यकाल पूरा करते हैं, जब तक कि उन्हें संवैधानिक प्रावधानों (जैसे दलबदल कानून, किसी अपराध में सजा मिलना, या खुद इस्तीफा देना) के तहत अयोग्य न ठहरा दिया जाए। भारत में, वापस बुलाने का अधिकार का अधिकार केवल सीमित जमीनी स्तर पर मौजूद है, मुख्य

रूप से पंचायती राज संस्थाओं में, जैसा कि छत्तीसगढ़ में है। इसे अभी तक राज्य या राष्ट्रीय राजनीति तक नहीं बढ़ाया गया है। इसलिए, यह एक पूरी तरह से विकसित चुनावी सुधार होने के बजाय, स्थानीय शासन का एक प्रयोग ज्यादा लगता है। गाँव के स्तर पर इसकी सफलता को अक्सर भविष्य में बड़े लोकतांत्रिक सुधारों के लिए एक संभावित मॉडल के तौर पर चर्चा में लाया जाता है।

देवरी रिकॉल वोट : भरी कुर्सी ने खाली कुर्सी को हराया

मध्य प्रदेश के भोपाल स्थित देवरी नगर पालिका में, मतदाताओं ने हाल ही में एक ऐतिहासिक वापस बुलाने का अधिकार प्रक्रिया के तहत बदलाव के बजाय निरंतरता को चुना।[10] इस प्रक्रिया ने नागरिकों को दो विकल्पों के बीच चुनने का मौका दिया। भरी कुर्सी (जिसका अर्थ है मौजूदा अध्यक्ष को पद पर बनाए रखना) और खाली कुर्सी (जिसका अर्थ है मौजूदा अध्यक्ष को पद से हटाना)। अंतिम मतगणना में, भरी कुर्सी विकल्प को 7,282 वोट मिले, जबकि खाली कुर्सी विकल्प को 6,085 वोट प्राप्त हुए। नगर पालिका स्तर के इस रिकॉल वोट में कुल 13,367 मतदाताओं ने हिस्सा लिया। परिणामस्वरूप, मौजूदा अध्यक्ष नेहा अल्केश जैन अपने पद पर बनी रहीं। यह घटना इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह मध्य प्रदेश में पुनर्जीवित वापस बुलाने का अधिकार व्यवस्था के पहले व्यावहारिक प्रयोगों में से एक है। यह दर्शाता है कि इस मामले में, मतदाताओं ने अपने चुने हुए प्रतिनिधि को बदलने के बजाय स्थानीय शासन में स्थिरता और निरंतरता को प्राथमिकता दी।

5. जटिल प्रक्रिया और उससे उत्पन्न होने वाली कानूनी पेचीदगियाँ

भारत में, झारखंड, हिमाचल प्रदेश, बिहार और उत्तराखंड आदि कुछ राज्यों ने अपने राज्य–स्तरीय कानूनों के तहत स्थानीय स्तर पर चुने हुए प्रतिनिधियों को वापस बुलाने का अधिकार के माध्यम से हटाने के प्रावधान लागू किए हैं। हालाँकि, इन राज्यों में यह प्रक्रिया एक जैसी नहीं है, और हर राज्य अपने अलग कानूनी ढाँचे का पालन करता है। मोटे तौर पर, इस प्रक्रिया को दो मुख्य चरणों में समझा जा सकता है।

पहला चरण : रिकॉल याचिका की शुरुआत

यह प्रक्रिया तब शुरू होती है जब मतदाताओं का एक समूह किसी चुने हुए प्रतिनिधि से असंतोष व्यक्त करता है और उसे हटाने की माँग करता है। इस उद्देश्य के लिए, एक रिकॉल याचिका तैयार की जाती है और संबंधित प्रशासनिक या चुनावी अधिकारियों के समक्ष प्रस्तुत की जाती है। जमा करने के बाद, अधिकारी जाँच करते हैं कि क्या याचिका कानून के तहत निर्धारित कानूनी आवश्यकताओं को पूरा करती है। सबसे महत्वपूर्ण शर्तों में आवश्यक हस्ताक्षरों की न्यूनतम संख्या और वह निर्धारित समय सीमा शामिल है जिसके भीतर ये हस्ताक्षर एकत्र किए जाने चाहिए।

[10] देवरी नगर पालिका रिकॉल इलेक्शन रिजल्ट 2024, द हिंदू, यहां उपलब्ध है https://www.thehindu.com

दूसरा चरण : मतदान और निर्णय लेने की प्रक्रिया

एक बार जब प्रारंभिक आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं, तो प्रक्रिया मतदान के चरण में आगे बढ़ती है। इस चरण में, रिकॉल प्रस्ताव पर चर्चा करने के लिए एक औपचारिक बैठक या चुनावी प्रक्रिया आयोजित की जाती है। जिस चुने हुए प्रतिनिधि के खिलाफ रिकॉल शुरू किया गया है, उसे भी अपना पक्ष प्रस्तुत करने का अवसर दिया जाता है, जिससे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन सुनिश्चित होता है। इसके बाद, यदि मतदाताओं का बहुमत हटाने के पक्ष में मतदान करता है, तो संबंधित सीट को रिक्त घोषित कर दिया जाता है, और प्रतिनिधि को आधिकारिक तौर पर पद से हटा दिया जाता है। इस प्रकार, रिकॉल प्रक्रिया मतदाताओं के सामूहिक निर्णय के आधार पर पूरी होती है।

इस प्रकार, वापस बुलाने का अधिकार प्रक्रिया, हालाँकि लोकतांत्रिक जवाबदेही को मजबूत करने के लिए डिजाइन की गई है, इसमें एक संरचित और बहु–स्तरीय प्रक्रिया शामिल है जो इसे कानूनी रूप से जटिल बनाती है। राज्यों के बीच भिन्नताएँ और इसमें शामिल प्रक्रियात्मक आवश्यकताएँ और अधिक जटिलताएँ जोड़ती हैं, जिससे इसका कार्यान्वयन व्यवहार में चुनौतीपूर्ण और अत्यधिक संवेदनशील हो जाता है।

6. भारत में वापस बुलाने का अधिकार : संवैधानिक वैधता

भारत के संविधान में वापस बुलाने का अधिकार का स्पष्ट रूप से कोई प्रावधान नहीं है। इसका अर्थ है कि संविधान में ऐसा कोई सीधा प्रावधान नहीं है जो मतदाताओं को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों को उनका कार्यकाल पूरा होने से पहले हटाने की अनुमति देता हो। भारत में प्रतिनिधि लोकतंत्र की प्रणाली अपनाई जाती है, जिसमें नागरिक समय–समय पर होने वाले चुनावों के माध्यम से अपने प्रतिनिधियों को चुनते हैं, और ये प्रतिनिधि कानून द्वारा निर्धारित एक निश्चित कार्यकाल तक अपने पद पर बने रहते हैं। चुनावों से संबंधित संवैधानिक प्रावधान मुख्य रूप से अनुच्छेद 324 और अनुच्छेद 326 के अंतर्गत आते हैं।[11] अनुच्छेद 324 के तहत भारत के चुनाव आयोग की स्थापना का प्रावधान है, जो स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव कराने के लिए जिम्मेदार होता है।[12] अनुच्छेद 326 श्सार्वभौमिक वयस्क मताधिकारश की गारंटी देता है, जिससे यह सुनिश्चित होता है कि प्रत्येक पात्र नागरिक को मतदान का अधिकार प्राप्त हो।[13] हालाँकि, इन दोनों में से किसी भी प्रावधान में चुने हुए प्रतिनिधियों को वापस बुलाने का कोई तंत्र शामिल नहीं है। भारतीय संवैधानिक ढाँचे के अंतर्गत, लोकतंत्र समय–समय पर होने वाले चुनावों पर आधारित है, न कि चुने हुए प्रतिनिधियों पर निरंतर नियंत्रण रखने पर। एक बार चुने जाने के बाद, सांसद और विधायक एक निश्चित कार्यकाल तक अपने पद पर बने रहते हैं; जब तक कि उन्हें संवैधानिक या कानूनी प्रक्रियाओं के माध्यम से पद से हटा न दिया

[11] भारत का संविधान, 1950।

[12] उपरोक्त।

[13] उपरोक्त।

जाएकृजैसे कि अयोग्यता, त्यागपत्र, दसवीं अनुसूची के तहत दलबदल, या आपराधिक मामलों में दोषसिद्धि। न्यायपालिका ने भी इस स्थिति को स्पष्ट किया है। **केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य**[14] मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया था कि लोकतंत्र संविधान की मूल संरचना का एक हिस्सा है, परंतु यह प्रतिनिधि लोकतंत्र के ढाँचे के भीतर ही कार्य करता है। न्यायालय ने मतदाताओं को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों को वापस बुलाने का कोई भी संवैधानिक या मौलिक अधिकार प्रदान नहीं किया है। हालाँकि, स्थानीय स्तर पर, भारत में कुछ सीमित प्रयोग देखने को मिलते हैं। उदाहरण के लिए, छत्तीसगढ़ में पंचायती राज प्रणाली के अंतर्गत ऐसे प्रावधान मौजूद हैं जो मतदाताओं को कुछ विशिष्ट कानूनी शर्तों के अधीन किसी सरपंच को वापस बुलाने की अनुमति देते हैं। परंतु यह एक सांविधिक प्रावधान (कानून द्वारा निर्मित प्रावधान) है, न कि कोई संवैधानिक अधिकार। इसलिए, यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि भारत में वापस बुलाने का अधिकार न तो कोई संवैधानिक अधिकार है और न ही कोई मौलिक अधिकार। यह राष्ट्रीय या राज्य स्तर पर संवैधानिक लोकतांत्रिक संरचना का हिस्सा नहीं है। भारत में इसे लागू करने के लिए या तो संविधान में संशोधन करना होगा, अथवा एक व्यापक कानून बनाना होगा; साथ ही, इसके दुरुपयोग को रोकने और राजनीतिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए कड़े सुरक्षा उपायों का होना भी अनिवार्य होगा।

7. भारत में वापस बुलाने का अधिकार : राज्यों में स्थिति

भारत में वापस बुलाने का अधिकार को राष्ट्रीय या राज्य विधायी स्तर पर लागू नहीं किया गया है। यह वर्तमान में स्थानीय स्व–शासन प्रणाली तक ही सीमित है, विशेष रूप से कुछ राज्यों में पंचायती राज संस्थाओं और शहरी स्थानीय निकायों में। इस प्रणाली का मुख्य उद्देश्य नागरिकों को एक सीमित कानूनी तंत्र प्रदान करना है, जिसके द्वारा वे अपने चुने हुए प्रतिनिधियों को पद से हटा सकें, यदि वे उनके काम–काज से असंतुष्ट हैं; इस प्रकार यह लोकतांत्रिक जवाबदेही को मजबूत करता है।

छत्तीसगढ़

भारत में वापस बुलाने का अधिकार का सबसे प्रमुख उदाहरण छत्तीसगढ़ में मिलता है। इसकी पंचायती राज प्रणाली के तहत, सरपंच (गाँव के मुखिया) को वापस बुलाने का प्रावधान है।[15] यदि किसी ग्राम पंचायत के मतदाता एक निर्धारित अवधि के बाद सरपंच के काम–काज से असंतुष्ट होते हैं, तो वे एक निर्धारित कानूनी प्रक्रिया शुरू कर सकते हैं।[16] यदि आवश्यक बहुमत इस वापसी का समर्थन करता है, तो सरपंच को पद से हटा दिया जाता है। इसे भारत में जमीनी स्तर पर प्रत्यक्ष लोकतांत्रिक भागीदारी के सबसे स्पष्ट उदाहरणों में से एक माना जाता है।

मध्य प्रदेश

[14] एआईआर 1973 एससी 1461।

[15] छत्तीसगढ़ पंचायत राज अधिनियम, 1993 (संशोधित), सरपंच को वापस बुलाने से संबंधित प्रावधान।

[16] एस.आर. माहेश्वरी, भारत में स्थानीय सरकार (लक्ष्मी नारायण अग्रवाल, आगरा, 2011) 312–315।

मध्य प्रदेश में, यह प्रणाली मुख्य रूप से पंचायत स्तर पर अविश्वास प्रस्ताव के माध्यम से काम करती है। इस प्रक्रिया में, ग्राम पंचायत के चुने हुए सदस्य सामूहिक रूप से यह तय करते हैं कि सरपंच या अन्य प्रतिनिधियों को हटाया जाए या नहीं।[17] हालाँकि, यह मतदाताओं द्वारा प्रत्यक्ष रूप से वापस बुलाने का अधिकार नहीं है, क्योंकि यह निर्णय आम जनता के बजाय चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा लिया जाता है।

राजस्थान

राजस्थान में भी स्थानीय निकायों में इसी तरह की प्रणाली का पालन किया जाता है, जहाँ सरपंच या नगरपालिका नेताओं जैसे चुने हुए प्रतिनिधियों को हटाने के लिए अविश्वास प्रस्ताव का उपयोग किया जा सकता है।[18] यह तंत्र जवाबदेही सुनिश्चित करता है, लेकिन यह प्रकृति में अप्रत्यक्ष ही रहता है और मतदाताओं द्वारा प्रत्यक्ष रूप से वापस बुलाने का अधिकार प्रदान नहीं करता है।

उत्तराखंड

उत्तराखंड में, पंचायत और नगरपालिका स्तरों पर अविश्वास प्रस्ताव के प्रावधान मौजूद हैं। ये तंत्र चुने हुए प्रतिनिधियों के काम–काज की निगरानी करने में मदद करते हैं और संस्थागत प्रक्रियाओं के माध्यम से उन्हें हटाने की अनुमति देते हैं।[19] हालाँकि, यह अभी भी नागरिकों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से वापस बुलाने की प्रणाली नहीं है।

बिहार

बिहार में भी पंचायती राज संस्थाओं में अविश्वास प्रस्ताव के प्रावधान हैं। यहाँ भी, यह प्रक्रिया मतदाताओं की प्रत्यक्ष भागीदारी के बजाय चुने हुए सदस्यों के माध्यम से पूरी की जाती है।[20] इसलिए, यह एक पूर्ण विकसित रिकॉल तंत्र नहीं माना जाता है।

भारत में, वापस बुलाने का अधिकार वर्तमान में एक सीमित और प्रायोगिक अवधारणा है, जो मुख्य रूप से स्थानीय स्तर पर काम करती है। इसका सबसे सुव्यवस्थित उदाहरण छत्तीसगढ़ में पंचायत स्तर पर मिलता है, जबकि अन्य राज्य मुख्य रूप से अप्रत्यक्ष अविश्वास प्रस्ताव तंत्रों पर निर्भर रहते हैं। राज्य या राष्ट्रीय विधायी स्तर पर वापस बुलाने का कोई प्रावधान नहीं है। इसलिए, भारत में रिकॉल का अधिकार एक पूरी तरह से स्थापित लोकतांत्रिक अधिकार होने के बजाय, अभी भी एक विकासशील विचार बना हुआ है।

8. भारत में वापस बुलाने का अधिकार : गुण और दोष

---

17 मध्य प्रदेश पंचायत राज एवं ग्राम स्वराज अधिनियम, 1993, सरपंच के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव से संबंधित प्रावधान।

18 राजस्थान पंचायती राज अधिनियम, 1994 में अविश्वास प्रस्ताव ।

19 उत्तराखंड पंचायती राज अधिनियम, 2016, पंचायतों और नगर पालिकाओं में अविश्वास प्रस्ताव।

20 बिहार पंचायती राज अधिनियम, 2006, मुखिया/सरपंच के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव।

वापस बुलाने का अधिकार एक चुनावी सुधार है जो मतदाताओं को अपने चुने हुए प्रतिनिधियों को उनका कार्यकाल पूरा होने से पहले ही हटाने की अनुमति देता है। भारत में, यह अभी भी कुछ स्थानीय निकायों तक ही सीमित है, लेकिन इसके व्यापक अनुप्रयोग पर अक्सर बहस होती रहती है। भारतीय परिप्रेक्ष्य से देखें तो, इस प्रणाली के फायदे और नुकसान दोनों हैं।

वापस बुलाने का अधिकार के गुण

वापस बुलाने का अधिकार को एक महत्वपूर्ण लोकतांत्रिक सुधार माना जाता है क्योंकि यह राजनीतिक प्रणाली में जवाबदेही को मजबूत करता है। इसका सबसे बड़ा फायदा यह है कि यह चुने हुए प्रतिनिधियों को जनता के प्रति अधिक जिम्मेदार बनाता है। जब नेताओं को पता होता है कि मतदाता उन्हें उनका कार्यकाल पूरा होने से पहले ही हटा सकते हैं, तो उनके जनहित में काम करने और अपने कर्तव्यों का ईमानदारी से पालन करने की संभावना अधिक होती है। एक और बड़ा फायदा यह है कि यह भ्रष्टाचार और सत्ता के दुरुपयोग को कम करने में मदद करता है। वापस बुलाए जाने की निरंतर संभावना प्रतिनिधियों के मन में एक प्रकार का भय पैदा करती है, जो अनैतिक कार्यों को हतोत्साहित करता है और शासन में पारदर्शिता को बढ़ावा देता है। इस तरह, यह राजनीतिक कदाचार पर एक प्रभावी रोक के रूप में काम करता है। वापस बुलाने का अधिकार लोकतांत्रिक प्रक्रिया में जनता की भागीदारी को भी बढ़ाता है। यह नागरिकों को केवल चुनावों के दौरान ही नहीं, बल्कि अपने प्रतिनिधियों पर निरंतर नियंत्रण बनाए रखने की अनुमति देता है। यह लोकतांत्रिक जुड़ाव को मजबूत करता है और लोगों को राजनीतिक मामलों में अधिक जागरूक और सक्रिय रहने के लिए प्रोत्साहित करता है। इसके अलावा, यह चुने हुए प्रतिनिधियों के बेहतर प्रदर्शन में भी योगदान देता है। चूंकि वे लगातार जनता की निगरानी में रहते हैं, इसलिए वे सार्वजनिक मुद्दों को अधिक कुशलता से हल करने और अपने निर्वाचन क्षेत्रों के कल्याण के लिए काम करने हेतु प्रेरित होते हैं। अंत में, यह प्रणाली जमीनी स्तर के लोकतंत्र को मजबूत करती है, विशेष रूप से स्थानीय स्तर पर। पंचायती राज निकायों जैसी संस्थाओं में, यह नागरिकों को सशक्त बनाती है और स्थानीय शासन को लोगों की जरूरतों के प्रति अधिक उत्तरदायी और जवाबदेह बनाती है।

वापस बुलाने का अधिकार के दोष

वापस बुलाने का अधिकार का उद्देश्य भले ही जवाबदेही में सुधार करना हो, लेकिन इसकी कई व्यावहारिक सीमाएं भी हैं। प्रमुख चिंताओं में से एक राजनीतिक अस्थिरता है। यदि वापस बुलाने के लिए चुनाव (रिकॉल इलेक्शन) बार–बार आयोजित किए जाते हैं, तो इससे शासन में अनिश्चितता पैदा हो सकती है। चुने हुए प्रतिनिधियों को लगातार हटाए जाने से प्रशासनिक कामकाज बाधित हो सकता है और नीतियों के कार्यान्वयन में देरी हो सकती है,

जिससे समग्र विकास प्रभावित होता है। एक और महत्वपूर्ण कमी राजनीतिक उद्देश्यों के लिए इसके दुरुपयोग की संभावना है। विपक्षी दल या प्रतिद्वंद्वी समूह वापस बुलाने की प्रक्रिया का उपयोग वास्तविक जन असंतोष के बजाय, राजनीतिक लाभ के लिए चुने हुए प्रतिनिधियों को निशाना बनाने के एक हथियार के रूप में कर सकते हैं। यह एक लोकतांत्रिक सुधार को राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता के साधन में बदल सकता है। इस प्रणाली में भारी प्रशासनिक और वित्तीय लागत भी शामिल होती है। बार–बार चुनाव करवाने में काफी ज्यादा सरकारी खर्च होता है और इससे चुनाव करवाने वाली मशीनरी पर भी अतिरिक्त दबाव पड़ता है। भारत जैसे विशाल और विविध देश में, यह एक गंभीर व्यावहारिक चुनौती बन सकता है। इसके अलावा, मतदाताओं के साथ हेर–फेर होने और उनमें भ्रम पैदा होने का भी खतरा रहता है। मतदाता कभी–कभी गलत जानकारी, तात्कालिक भावनाओं या पक्षपातपूर्ण चुनावी अभियानों से प्रभावित हो सकते हैं, जिसके चलते वे किसी प्रतिनिधि को वापस बुलाने का कोई अनुचित या अतार्किक फैसला ले सकते हैं। इससे लोकतांत्रिक निर्णय लेने की गुणवत्ता कमजोर पड़ सकती है। अंत में, बार–बार शरिकॉलश की प्रक्रिया अपनाने से शासन की निरंतरता बाधित हो सकती है। नेतृत्व में लगातार बदलाव होने से दीर्घकालिक योजनाओं और चल रही विकास परियोजनाओं पर नकारात्मक असर पड़ सकता है। नतीजतन, नीतिगत स्थिरता प्रभावित हो सकती है, जो कि प्रभावी शासन और सतत विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। भारतीय परिप्रेक्ष्य में, वापस बुलाने का अधिकार (प्रतिनिधि को वापस बुलाने का अधिकार) एक दोधारी तलवार की तरह है। जहाँ एक ओर यह लोकतांत्रिक जवाबदेही और नागरिकों के सशक्तिकरण को बढ़ावा दे सकता है, वहीं दूसरी ओर इसमें अस्थिरता और दुरुपयोग का खतरा भी बना रहता है। इसलिए, यदि इसे बड़े पैमाने पर लागू किया जाता है, तो इसे अत्यंत सावधानीपूर्वक डिजाइन किया जाना चाहिए; इसके लिए कड़े कानूनी सुरक्षा–उपाय, स्पष्ट कार्यप्रणालियाँ और सीमित दायरे में इसका प्रयोग सुनिश्चित किया जाना चाहिएकृविशेष रूप से इसकी शुरुआत स्थानीय स्तर से की जानी चाहिए।

9. भारत में 'राइट टू रिकॉल' / निर्वाचन जवाबदेही से संबंधित न्यायिक निर्णय

भारत में ऐसा कोई प्रत्यक्ष सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय नहीं है जो 'राइट टू रिकॉल' को एक संवैधानिक अधिकार के रूप में मान्यता देता हो। फिर भी, कई महत्वपूर्ण निर्णय लोकतंत्र, निर्वाचन जवाबदेही, मतदाता अधिकारों तथा स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनावों पर प्रकाश डालते हैं, जिनके माध्यम से इस अवधारणा को परोक्ष रूप से समझा जाता है।

1. केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973)[21]

इस ऐतिहासिक मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि लोकतंत्र संविधान की मूल संरचना का हिस्सा है। न्यायालय ने स्पष्ट किया कि भारत एक प्रतिनिधिक लोकतंत्र का पालन करता है, जिसमें निर्वाचित प्रतिनिधि

[21] एआईआर 1973 एससी 1461।

निश्चित अवधि के लिए शासन करते हैं। यह निर्णय महत्वपूर्ण है क्योंकि यह दर्शाता है कि संविधान आवधिक चुनावों का समर्थन करता है, न कि रिकॉल जैसे निरंतर हटाने की व्यवस्था का।

2. भारत संघ बनाम एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (2002)[22]

सर्वोच्च न्यायालय ने यह माना कि मतदाताओं को चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों के बारे में जानकारी प्राप्त करने का मौलिक अधिकार है। इसमें उनके आपराधिक रिकॉर्ड, संपत्ति और शैक्षिक योग्यता की जानकारी शामिल है। इस निर्णय ने चुनावी पारदर्शिता और मतदाता सशक्तिकरण को मजबूत किया, जो 'राइट टू रिकॉल' की मूल भावना से भी जुड़ा हुआ है।

3. लिली थॉमस बनाम भारत संघ (2013)[23]

न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि यदि कोई निर्वाचित प्रतिनिधि गंभीर आपराधिक अपराध में दोषी ठहराया जाता है, तो वह स्वतः अयोग्य हो जाएगा। यह मामला महत्वपूर्ण है क्योंकि यह दर्शाता है कि भारतीय कानून केवल कानूनी अयोग्यता के आधार पर प्रतिनिधियों को हटाने की अनुमति देता है, न कि मतदाता द्वारा रिकॉल के माध्यम से।

4. पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम भारत संघ (2003)[24]

न्यायालय ने स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनावों के महत्व पर जोर दिया और 'NOTA' (उपरोक्त में से कोई नहीं) की अवधारणा के माध्यम से मतदाता की पसंद को सशक्त किया। उपरोक्त में से कोई नहीं की अवधारणा मतदाताओं की असंतुष्टि को दर्शाता है, परंतु यह निर्वाचित प्रतिनिधियों को वापस बुलाने की अनुमति नहीं देता।

भारतीय न्यायिक दृष्टिकोण 'राइट टू रिकॉल' को न तो कानूनी और न ही संवैधानिक अधिकार के रूप में स्वीकार करता है। हालांकि, सर्वोच्च न्यायालय ने निरंतर चुनावी पारदर्शिता, मतदाता अधिकारों और लोकतांत्रिक जवाबदेही को सुदृढ़ किया है। ये सभी निर्णय मिलकर इस बहस के लिए एक परोक्ष आधार प्रदान करते हैं कि क्या भारत में 'राइट टू रिकॉल' जैसे तंत्र को लागू किया जाना चाहिए।

10. निष्कर्ष

जब हम चुनावी सुधारों की बात करते हैं, तो वापस बुलाने का अधिकार (वापस बुलाने का अधिकार) एक बहुत ही दिलचस्प विचार है, खासकर भारत जैसे लोकतंत्र में, जहाँ सब कुछ प्रतिनिधि शासन पर निर्भर करता है। मूल रूप से, यह मतदाताओं को यह शक्ति देता है कि वे अपने चुने हुए प्रतिनिधियों को उनका कार्यकाल पूरा होने

[22] एआईआर 2002 एससी 2112।

[23] (2013) 7 एससीसी 653।

[24] (2003) 4 एससीसी 399।

से पहले ही पद से हटा सकें। इस तरह का नियंत्रण राजनेताओं को कहीं ज्यादा जवाबदेह बनाएगा, क्योंकि अगर वे काम में ढिलाई बरतते हैं या किसी घोटाले में फंस जाते हैं, तो लोग उन्हें सचमुच पद से हटा सकते हैं।

इसका मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि देश में सुशासन, पारदर्शिता और जनता की वास्तविक भागीदारी हो। अभी भारत में, वापस बुलाने का अधिकार का संविधान में स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं है। यहाँ की व्यवस्था कुछ इस तरह है। मतदाता अपने प्रतिनिधियों को चुनते हैं, वे प्रतिनिधि एक निर्धारित कार्यकाल तक सेवा करते हैं, और बस बात वहीं खत्म हो जाती है। यदि आप किसी चुने हुए प्रतिनिधि को उसका कार्यकाल समाप्त होने से पहले पद से हटाना चाहते हैं, तो आपको कानूनी उपायों पर निर्भर रहना पड़ता है जैसे कि अयोग्यता घोषित होना, इस्तीफा देना, या आपराधिक कानून के तहत दोषी ठहराया जाना।

इसलिए, एक बार किसी के चुने जाने के बाद, आम लोगों का उसके कार्यकाल के दौरान उस पर कोई सीधा नियंत्रण नहीं रहता। हालाँकि, स्थानीय स्तर पर, कुछ राज्यों जैसे छत्तीसगढ़ ने रिकॉल के प्रावधानों के साथ प्रयोग करना शुरू कर दिया है। उदाहरण के लिए, वहाँ मतदाता कुछ विशेष परिस्थितियों में सरपंच को पद से हटा सकते हैं। यह इस बात का प्रमाण है कि रिकॉल असंभव नहीं है, लेकिन यह अभी भी दुर्लभ है, और पूरे देश में इसके लिए कोई एक समान व्यवस्था लागू नहीं है। अधिकांश अन्य **राज्य अविश्वास प्रस्ताव** के माध्यम से काम चलाते हैं, जो कि रिकॉल जैसा बिल्कुल नहीं है यह ज्यादा अप्रत्यक्ष तरीका है और इसमें रिकॉल की वास्तविक भावना परिलक्षित नहीं होती। गहराई से देखने पर पता चलता है कि वापस बुलाने का अधिकार के अपने फायदे और नुकसान दोनों हैं। सकारात्मक पक्ष यह है कि यह राजनेताओं को ईमानदार बनाए रखता है, भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने में मदद करता है, और उन्हें इस बात पर ध्यान देने के लिए प्रेरित करता है कि उनके मतदाता क्या चाहते हैं। यह नागरिकों को अधिक शक्ति प्रदान करता है और लोकतंत्र को मजबूत बनाता है। लेकिन, इसका एक दूसरा पहलू भी हैरू यह राजनीति में अस्थिरता पैदा कर सकता है, विरोधी गुटों द्वारा इसके दुरुपयोग का रास्ता खोल सकता है, अनावश्यक चुनावों का कारण बन सकता है, और चुनावी व्यवस्था पर काम का अतिरिक्त बोझ डाल सकता है। भारत की अदालतें इस पूरे मामले को लेकर काफी सतर्क रही हैं। सर्वोच्च न्यायालय स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों का समर्थन करता है, लेकिन उसने शरिकॉलश को किसी भी प्रकार का मौलिक अधिकार घोषित नहीं किया है। उनका मुख्य जोर इस विचार पर है कि जवाबदेही नियमित चुनावों के माध्यम से सुनिश्चित होती है, न कि प्रतिनिधियों को उनके कार्यकाल के बीच में ही पद से हटाने की शक्ति से। कुल मिलाकर, वापस बुलाने का अधिकार भारत में लोकतंत्र के काम करने के तरीके में सचमुच एक बड़ा बदलाव ला सकता हैकृशायद बेहतर के लिए, क्योंकि इससे राजनेता हमेशा चौकस रहेंगे। लेकिन इसमें कुछ असली चुनौतियाँ भी हैं इसके लिए मजबूत कानूनों और साफ नियमों की जरूरत होगी, ताकि इस प्रक्रिया का गलत इस्तेमाल न हो, और इसे बहुत सावधानी से लागू करना होगा। भारत का लोकतंत्र कितना जटिल और विविध है, इसे देखते हुए, इसकी शुरुआत धीरे–धीरे स्थानीय स्तर से करना ही सबसे समझदारी भरा कदम लगता

है। आखिर में, अगर भारत कभी इसे अपनाने का फैसला करता है, तो इस व्यवस्था को एक संतुलन बनाए रखना होगारू प्रतिनिधियों को और ज्यादा जवाबदेह बनाना, और साथ ही राजन